International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2026; 3(3): 128-132
© 2026 IJMH
www.themultijournal.com

Received: 25-05-2026
Accepted: 19-06-2026
Publish : 22-06-2026

अखिलेश कुमार बसेडिया
शोधच्छात्र,
शिक्षाशास्त्रविद्याशाखा,
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,
नासिक परिसर, नासिक

Correspondence:
अखिलेश कुमार बसेडिया
शोधच्छात्र,
शिक्षाशास्त्रविद्याशाखा,
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,
नासिक परिसर, नासिक

भाषा का स्वरूप, महत्त्व और भारतीय चिंतन

अखिलेश कुमार बसेडिया

शोधसार- यह शोधलेख भाषा के स्वरूप, महत्व और भारतीय चिंतन में उसकी केंद्रीय भूमिका को स्पष्ट करता है। भाषा मानव ज्ञान, विचार और अभिव्यक्ति का मूल साधन है, जिसे भारतीय परंपरा दिव्य शक्ति मानती है। संस्कृत भारतीय संस्कृति और ज्ञान-परंपरा की मूल भाषा है, जिसने दर्शन, विज्ञान, कला और साहित्य को गहराई प्रदान की। भारतीय ज्ञान-परंपरा वेदों, उपनिषदों और शास्त्रों के माध्यम से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को दिशा देती है। - यह शोधलेख उपनिषद में वर्णित पंचकोश सिद्धांत को प्रकाशित करते हुए *विज्ञानमय कोश* और भाषा के संबंध स्पष्ट करता है। *विज्ञानमय* कोश सत्य की पहचान कराने और सही निर्णय लेने में सहायता करता है। योग और ध्यान इन कोषों को संतुलित करते हैं तथा मनुष्य को शांत, जागरूक और उद्देश्यपूर्ण जीवन की ओर ले जाते हैं।

कूटशब्द- भाषा, दर्शन,ज्ञान ,मन, विज्ञान ,प्रक्रिया ।

प्रस्तावना

मानव सभ्यता अनेक उपलब्धियों से भरी हुई है, पर भाषा उसकी सबसे महान उपलब्धि के रूप में सामने आती है। मानव के भीतर विचार करने और उन विचारों को व्यक्त करने की शक्ति जन्म लेती है और यह शक्ति ही उसे अन्य प्राणियों से अलग बनाती है। मनुष्य जब श्वास लेता है या चलता है, तब वह इन क्रियाओं पर ध्यान नहीं देता। यही स्थिति भाषा के साथ भी दिखाई देती है। मनुष्य भाषा को सामान्य क्रिया मान लेता है, जबकि भाषा उसकी चेतना का आधार बनती है। भाषा ही उसकी बुद्धि को दिशा देती है और ज्ञान को आकार देती है।

आचार्य भर्तृहरि कहते हैं –

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते ।
अनुबिद्धमिव ज्ञानम् सर्व शब्देन भासते ।।[1]

संसार में किसी भी प्रकार का ज्ञान शब्द के बिना प्रकट नहीं होता। मनुष्य शब्द के माध्यम से ही किसी भी वस्तु, विचार, भावना या अनुभूति को जानता है। शब्द उसकी बुद्धि के लिए प्रकाश का काम करता है। आचार्य दण्डी भी इसी विचार को मजबूत करते हुए कहते हैं

इन्दन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम् ।
यदि शब्दाहवयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते ।।[2]

यदि शब्द रूपी प्रकाश न हो तो तीनों लोक अज्ञान की छाया में डूब जाएँ। इन दोनों आचार्यों के विचार भाषा के वास्तविक स्वरूप को समझाते हैं। भाषा ज्ञान को जन्म देती है और ज्ञान ही मानव को आगे बढ़ाता है।

किसी भी समाज की भाषा जितनी समृद्ध होती है, उस समाज की संस्कृति उतनी ही ऊंची उठती है। भाषा केवल विचारों को बाँटने का माध्यम नहीं बनती। वह ज्ञान को सुरक्षित रखने, आगे बढ़ाने और समाज में फैलाने का माध्यम भी बनती है। मनोभाषिक शास्त्र भाषा को हिमखंड के समान मानता है। हिमखंड का छोटा हिस्सा पानी के ऊपर दिखाई देता है और बड़ा हिस्सा पानी के भीतर छिपा रहता है। भाषा भी इसी प्रकार मनुष्य के मन में विशाल रूप में रहती है और उसका छोटा हिस्सा ही बोलकर सामने आता है। मनुष्य के भीतर विचारों का भंडार रहता है। जब वह बोलना चाहता है, तब उसका मन सक्रिय होता है और भाषा का निर्माण शुरू करता है।

भारतीय मनीषियों ने वाणी को बहुत सूक्ष्मता के साथ समझा और इसके वर्गीकरण को वैज्ञानिक रूप दिया. ऋग्वेद में वाणी के चार स्तरों का वर्णन मिलता है -

चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिण: | तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिण: गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति ॥[3]

पहला स्तर 'परा' कहलाता है. यह मूलाधार में स्थित नादब्रह्म या शब्दब्रह्म का रूप है. यह ध्वनि का मूल स्रोत है और मनुष्य की चेतना में बहुत सूक्ष्म रूप में रहता है. दूसरा स्तर 'पश्यन्ती' कहलाता है. यह नाभि से हृदय की ओर बढ़ती है और मन इस वाणी को अनुभव करता है. पश्यन्ती वाणी मनुष्य के भीतर विचार का प्रथम रूप बनती है. तीसरा स्तर 'मध्यमा' का है. यह बुद्धि की पकड़ में आता है और विचार को बोलचाल के योग्य बनाता है. चौथा और अंतिम स्तर 'वैखरी' है. यह कंठ और मुख से निकलकर ध्वनि के रूप में बाहर आता है और श्रोता तक पहुँचता है. मनुष्य जो बोलता है, वह वैखरी वाणी का ही रूप है.

आधुनिक विज्ञान भी भारतीय चिंतन के इन सिद्धांतों को अपने तरीके से समझता है। मस्तिष्क के 'ब्रोका क्षेत्र' और 'वर्नी क्षेत्र' भाषा निर्माण और भाषा ग्रहण की प्रक्रिया को संभालते हैं। मानव मस्तिष्क का यह हिस्सा विचारों, ध्वनि और अर्थ के बीच संबंध स्थापित करता है। यह विज्ञान और परंपरा के बीच अद्भुत सामंजस्य का उदाहरण है। भारतीय ऋषियों ने जिस सत्य को अनुभव के आधार पर समझा, आधुनिक विज्ञान उसी को प्रयोगों और शोधों के माध्यम से सामने लाता है।

भारत भाषाओं के विशाल उद्यान के रूप में दिखाई देता है। यहाँ अनेक भाषा-परिवार पनपते हैं। भारतीय संविधान 22 भाषाओं को मान्यता देता है।[4] यह विविधता केवल भाषा की नहीं, बल्कि संस्कृति की विविधता को भी दर्शाती है। उत्तर भारत में मुख्य रूप से इंडो आर्य भाषाएँ बोली जाती हैं। दक्षिण भारत द्रविड़ भाषाओं का केंद्र बनता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में तिब्बती-बर्मी भाषाओं का प्रभाव दिखता है। यह विविध भाषा-धारा भारत की पहचान बनती है।

संस्कृत भारतीय ज्ञान परंपरा की जड़ें मजबूत करती है। भारतीय दर्शन, साहित्य, व्याकरण और आध्यात्मिकता का विशाल भंडार संस्कृत में मिलता है। इस भाषा ने भारतीय मन को गहराई दी और भारतीय चिंतन को दिशा दी। संस्कृत शब्दों में इतनी शक्ति है कि वे ध्वनि, अर्थ और अनुभूति तीनों स्तरों पर असर डालते हैं। यही कारण है कि भारतीय ऋषि भाषा को पवित्र कार्य मानते थे।

आधुनिक शिक्षा जगत भी भाषा की भूमिका को बहुत महत्त्व देता है। शिक्षा नीति कहती है कि बालक को उसकी मातृभाषा में शिक्षा मिले। मातृभाषा में सीखने से बच्चा अधिक स्पष्ट सोचता है। वह अपने अनुभवों को आसानी से जोड़ पाता है। वह कठिन विषयों को सरल तरीके से समझता है। यह प्रक्रिया उसके मानसिक विकास को तेज बनाती है। मातृभाषा उसकी भावनाओं से भी जुड़ती है। बच्चा अपने हृदय की बात मातृभाषा में पूरी स्पष्टता के साथ कहता है

भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं बनती, बल्कि भाषा मनुष्य की पहचान का आधार बनती है. जब वह अपनी भाषा बोलता है, तब वह अपने समाज, अपने परिवार, अपने पूर्वजों और अपनी संस्कृति से जुड़ता है. भाषा भावनाओं को सीधा रास्ता देती है. मनुष्य प्रेम, सम्मान, दुःख, खुशी या आशा को भाषा में ढालकर ही दूसरों तक पहुँचाता है. यह उसकी सामाजिकता को मजबूत करती है.

भाषा मनुष्य की सोच को भी आकार देती है। अलग-अलग भाषाएँ अलग सोच पद्धति को जन्म देती हैं। भाषा के शब्द और वाक्य उसकी दृष्टि को निर्धारित करते हैं। यह प्रक्रिया उसके जीवन को प्रभावित करती है। मनुष्य जिस भाषा में सोचता है, उसी भाषा में वह संसार को देखता है। यह भाषा की अनोखी शक्ति है।

भारतीय चिंतन इस विषय में बहुत गहराई प्रदान करता है। यहाँ भाषा को केवल बोलचाल का माध्यम नहीं माना जाता. यहाँ भाषा को ज्ञान, साधना, शिक्षा और संस्कृति का मूल तत्व माना जाता है. भारतीय अध्यात्म में जाता है कि वाणी मनुष्य को दिव्यता से जोड़ती है. मंत्र और उच्चारण मन को स्थिर करते हैं और चेतना को विस्तार देते हैं. भारतीय परंपरा में भाषा ध्वनि के रूप में ब्रह्म का अनुभव कराने का माध्यम बनती है.

भाषा और मनुष्य के संबंध में एक और बात स्पष्ट दिखाई देती है. भाषा मनुष्य के मन में जन्म लेती है और फिर बाहर आती है. विचार और वाणी का यह संबंध मनुष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व को आकार देता है. जब मनुष्य भाषा को सही तरीके से प्रयोग करता है, तब वह अपने विचारों को प्रभावी रूप देता है. स्पष्ट भाषा स्पष्ट विचार को जन्म देती है. अस्पष्ट भाषा भ्रम पैदा करती है. भाषा की गुणवत्ता मनुष्य के व्यक्तित्व को ऊँचा या नीचे ले जाती है.

भारतीय समाज में भाषा का सामाजिक प्रभाव बहुत व्यापक है. विभिन्न क्षेत्रों की भाषाएँ उस क्षेत्र की संस्कृति, संगीत, नृत्य, खानपान और जीवनशैली से जुड़ती हैं. हिंदी उत्तर भारत का बड़ा सांस्कृतिक आधार बनती है. तमिल, कन्नड़, तेलुगु और मलयालम दक्षिण भारत की पहचान बनती हैं. गुजराती, मराठी, पंजाबी, असमिया, बंगला और ओडिया अपनी अद्भुत साहित्यिक परंपरा लेकर खड़ी होती हैं. यह विविधता भारत को रंगों से भर देती है.

आज के समय में भाषा की भूमिका और बढ़ गई है। तकनीकी युग में भाषा नए रूप में सामने आती है। इंटरनेट भाषा को और अधिक गतिशील बनाता है। मनुष्य मोबाइल और कंप्यूटर के माध्यम से हर दिन भाषा का प्रयोग करता है और नए शब्दों का निर्माण करता है। यह प्रक्रिया भाषा को बदलती रहती है। भाषा समय के साथ नई ऊर्जा प्राप्त करती है और पुरानी सीमाएँ तोड़ती रहती है।

भारतीय चिंतन इस परिवर्तन को स्वीकार करता है। यहाँ भाषा को जीवंत इकाई माना जाता है। भाषा समय के साथ चलती है। उसका विस्तार होता है, वह नई पीढ़ी के विचारों को अपनाती है। यही कारण है कि भारतीय भाषाएँ आज भी जीवंत, शक्तिशाली और रचनात्मक रूप में खड़ी हैं।

अंत में यह कहना उचित है कि भाषा मनुष्य का सबसे बड़ा साधन है। वह उसके विचारों को मार्ग देती है, उसकी भावनाओं को अभिव्यक्ति देती है, उसकी संस्कृति को पहचान देती है और उसके समाज को संगठित करती है। भाषा मनुष्य के भीतर ज्ञान के द्वार खोलती है। शब्द मनुष्य को अज्ञान से निकालकर प्रकाश की ओर ले जाते हैं। भारतीय चिंतन इस सत्य को लंबे समय से समझता है और भाषा को मानव जीवन का आधार मानता है। भाषा का सम्मान करना, उसे विकसित करना और उसे सहेजकर रखना हमारी सांस्कृतिक जिम्मेदारी बनती है।

संस्कृत भारत की सांस्कृतिक आत्मा की केंद्रभूत भाषा है। यह केवल प्राचीन परंपरा की गूंज नहीं, बल्कि भारतीय मन और चिंतन की जड़ है। हिंद-आर्य भाषा परिवार में इसका स्थान सर्वोच्च माना जाता है। विद्वान इसे देववाणी कहते हैं, क्योंकि ऋषियों ने इसी भाषा में अपने आध्यात्मिक अनुभव, मंत्र, सूत्र और दर्शन को अभिव्यक्त किया। वैदिक काल से आज तक संस्कृत ने अपनी गरिमा और प्रासंगिकता बनाए रखी है।

ऋग्वेद जैसे प्राचीन ग्रंथ संस्कृत में रचे गए, जो इसकी प्राचीनता और महत्ता के प्रमाण हैं। जब मानव ने प्रकृति, देवताओं और ब्रह्मांड के रहस्यों को समझने का प्रयास किया, तब उसने संस्कृत को अपना माध्यम बनाया। यह भाषा मनुष्य के विचारों को आकार देती रही और सत्य की खोज में उसका मार्गदर्शन करती रही। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ने भारतीय जीवन और चिंतन को दिशा दी — यह संस्कृत की अभिव्यक्तिगत शक्ति और ध्वन्यात्मक शुद्धता को दर्शाता है।

संस्कृत केवल धर्म और दर्शन की भाषा नहीं रही। राजनीति, शासन, युद्धकला, चिकित्सा, शिक्षा, गणित, नाट्य, संगीत , खगोल और भूगोल जैसे अनेक क्षेत्रों में इसने ज्ञान को विकसित किया। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अर्थशास्त्र, नाट्यशास्त्र, व्याकरण और न्यायशास्त्र जैसे ग्रंथों ने भारतीय बौद्धिक परंपरा को ऊँचाई दी। इस ज्ञान ने समाज में वैज्ञानिक दृष्टि, तर्कशक्ति और सांस्कृतिक संतुलन को विकसित किया।

संस्कृत आधुनिक भारतीय भाषाओं की जननी है। हिंदी, बंगला, मराठी, नेपाली, पंजाबी और सिन्धी जैसी भाषाएँ संस्कृत से ही विकसित हुई हैं। इन भाषाओं की शब्दावली और व्याकरण में संस्कृत की छाप स्पष्ट दिखती है। हिंदी, जो भारत की राजभाषा है, शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई, जो संस्कृत परंपरा का ही विस्तार थी। यह संस्कृत की स्थायी शक्ति का प्रमाण है।

यह भाषा केवल भारत तक सीमित नहीं रही। यूरोप के बंजारों की रोमानी भाषा भी संस्कृत परिवार से जुड़ी है। यह संस्कृत की वैश्विक महत्ता का संकेत देती है।

भारत के उत्तर से दक्षिण और पूरब से पश्चिम तक संस्कृत का प्रभाव फैला। शिक्षा, न्याय, शासन और अध्ययन में इसका व्यापक प्रयोग होता रहा। यह भाषा भारत की सांस्कृतिक अस्मिता का आधार रही।

आज भी संस्कृत धर्म, योग, आयुर्वेद, ज्योतिष और दर्शन के क्षेत्र में सक्रिय है। आधुनिक शिक्षा में भी इसे महत्व दिया जाता है। पाणिनि का व्याकरण इसे विश्व की सबसे वैज्ञानिक भाषाओं में शामिल करता है, और इसकी सटीकता के कारण इसे कंप्यूटिंग और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में उपयोगी माना जाता है।

इस प्रकार संस्कृत भारतीय ज्ञान, संस्कृति और चिंतन का विशाल स्तंभ है — यह भारत की आत्मा की भाषा है।

भारत की ज्ञान परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध परंपराओं में गिनी जाती है। यहाँ ज्ञान केवल पुस्तकों में सीमित नहीं रहा, बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में व्याप्त रहा। ऋषि-मनीषियों ने प्रकृति, समाज और मानव-जीवन की गहराइयों को समझकर अपने अनुभवों को वेदों, सूत्रों और कथाओं में संरक्षित किया।

वेद इस परंपरा के मूल स्तंभ हैं। उनमें विज्ञान, गणित, चिकित्सा, खगोल, दर्शन और समाजशास्त्र के विचार मिलते हैं। वेद केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि मानव की जिज्ञासा के उत्तर और सत्य की खोज का मार्ग हैं। उपनिषद अस्तित्व, चेतना और ब्रह्म के रहस्यों पर प्रकाश डालते हैं, जबकि पुराण इतिहास, संस्कृति और नैतिक मूल्यों का शिक्षण करते हैं।

वेदांग शिक्षा, व्याकरण, खगोल, छंद और दर्शन के अध्ययन का आधार बने। कौटिल्य का अर्थशास्त्र शासन व्यवस्था का वैज्ञानिक ढाँचा प्रस्तुत करता है, जबकि चरक और सुश्रुत संहिताएँ चिकित्सा विज्ञान के उन्नत स्वरूप हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा केवल संरक्षण तक सीमित नहीं रही; यह निरंतर परिवर्तन और नवाचार की दिशा में बढ़ती रही। इस लचीलेपन ने भारतीय समाज को गतिशील बनाए रखा।

मध्यकाल में संत साहित्य ने इस परंपरा को लोक तक पहुँचाया। कबीर, तुलसीदास और मीराबाई जैसे संतों ने भक्ति और ज्ञान को सरल भाषा में जन-जन तक पहुँचाया, जिससे समाज में समानता और मानवता के विचार मजबूत हुए।

भारतीय ज्ञान परंपरा का व्यावहारिक स्वरूप भी महत्वपूर्ण रहा — कृषि, वास्तुकला, पर्यावरण संरक्षण, जल प्रबंधन और औषधि विज्ञान में इसका उपयोग हुआ। इसने जीवन को संतुलित और प्रकृति-संवादी बनाया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसी ज्ञान परंपरा को आधुनिक शिक्षा में पुनर्जीवित करने का प्रयास करती है। यह भारतीय दर्शन, साहित्य और विज्ञान को नई शिक्षा प्रणाली में एकीकृत करती है ताकि विद्यार्थी आधुनिकता के साथ अपनी जड़ों से जुड़े रहें।

भारतीय ज्ञान परंपरा आज भी जीवंत है — यह मनुष्य को सत्य, अहिंसा, सहिष्णुता, न्याय और करुणा की ओर अग्रसर करती है। यह केवल भारत की नहीं, बल्कि संपूर्ण मानवता की साझा धरोहर है।

भारतीय दर्शन मानव जीवन को केवल शरीर तक सीमित नहीं मानता, बल्कि उसे एक बहुआयामी अस्तित्व के रूप में देखता है। वेदांत के ऋषियों ने बताया कि मनुष्य के भीतर पाँच आवरण या परतें होती हैं, जिन्हें पंचकोश कहा जाता है। ये पाँचों कोश मानव जीवन को समझने, स्वस्थ रखने और आत्मविकास की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रत्येक कोश मनुष्य के भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक अनुभवों को जोड़ता है।

पहला कोश — अन्नमय कोश

यह शरीर का स्थूल या भौतिक हिस्सा है। भोजन से ही शरीर का निर्माण और उसकी ऊर्जा बनी रहती है। जब मनुष्य संतुलित आहार लेता है, स्वच्छ जीवन जीता है और शरीर को सक्रिय रखता है, तो उसका अन्नमय कोश सुदृढ़ होता है। योग में बताए गए यम, नियम और आसनों के अभ्यास से इस कोश का संतुलन बनाए रखा जा सकता है। जब शरीर स्वस्थ होता है, तब मन भी स्थिर रहता है।[7]

दूसरा कोश — प्राणमय कोश

यह प्राणशक्ति या जीवन ऊर्जा से बना है। हर श्वास के साथ शरीर में ऊर्जा प्रवेश करती है और पूरे शरीर में चेतना का संचार करती है। प्राणायाम के अभ्यास से यह कोश सशक्त होता है। यह कोश मन और शरीर के बीच सेतु का कार्य करता है। जब यह संतुलित होता है, तो व्यक्ति तनाव, थकान और अस्थिरता से जल्दी उबर जाता है।[8]

तीसरा कोश — मनोमय कोश

ज्ञानेन्द्रियाणि च मनश्च मनोमयः
स्यात् कोशो ममाहमिति वस्तुविकल्पहेतुः ।
संज्ञादिभेदकलनाकलितो बलीयां-
स्तत्पूर्वकोशमभिपूर्य विजृम्भते यः ॥[5]

यह मन, विचार और भावनाओं से संबंधित है। इसी कोश के माध्यम से मनुष्य दुनिया को देखता, समझता और प्रतिक्रिया देता है। जब मन अस्थिर या अशांत होता है, तो यह कोश भी असंतुलित हो जाता है। ध्यान, योग और संयमित जीवन के माध्यम से मनोमय कोश को संतुलित रखा जा सकता है।

चौथा कोश — विज्ञानमय कोश

बुद्धिर्बुद्धीन्द्रियैः सार्धं सवृत्तिः कर्तृलक्षणः ।
विज्ञानमयकोशस्स्यात् पुंसः संसारकारणम् ॥

यह बुद्धि और विवेक का केंद्र है। यह कोश व्यक्ति को सही और गलत का भेद सिखाता है और निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करता है। जब बुद्धि स्पष्ट होती है, तो मनुष्य सत्य के मार्ग पर चल पाता है। चूंकि यह कोश आत्मा के अधिक निकट है, इसलिए इसे उच्चतर कोश माना गया है।

पाँचवाँ कोश — आनंदमय कोश

यह आत्मा के आनंद से बना है। जब व्यक्ति ध्यान, भक्ति और सत्य के मार्ग पर चलता है, तो वह इस कोश का अनुभव करता है। यही कोश जीवन में गहरी शांति, संतोष और परम सुख प्रदान करता है।

पंचकोश सिद्धांत यह सिखाता है कि मनुष्य केवल शरीर नहीं है, बल्कि वह पाँच स्तरों से बना एक संपूर्ण तंत्र है। शरीर, प्राण, मन, बुद्धि और आनंद — ये पाँचों मिलकर जीवन को पूर्णता प्रदान करते हैं। जब व्यक्ति योग, ध्यान और स्वस्थ आचरण अपनाता है, तो उसके पाँचों कोश संतुलित रहते हैं, और वह वास्तव में स्वस्थ, शांत और जागरूक जीवन जीता है।

विज्ञानमय कोश, पंचकोषीय सिद्धांत का चौथा आवरण है। यह बुद्धि, विवेक और ज्ञान का केंद्र है, जो मनुष्य को निर्णय लेने, सत्य पहचानने और सही दिशा में आगे बढ़ने की शक्ति देता है। यह मनोमय कोश से अधिक सूक्ष्म और प्रभावशाली स्तर पर कार्य करता है।

'विज्ञानमय' का अर्थ है 'ज्ञान से बना'। यहाँ ज्ञान केवल सूचना नहीं, बल्कि वह ऊर्जा है जो मनुष्य को सही समझ, विवेक और दृष्टि प्रदान करती है। जब व्यक्ति सोचता है, निर्णय करता है, सत्य को पहचानता है या किसी कठिन परिस्थिति में मार्ग ढूँढता है, तब यही कोश सक्रिय होता है। यह विचार, तर्क और अनुभव को एक सूत्र में पिरो देता है।

वेदांत के अनुसार, विज्ञानमय कोश वह स्तर है जहाँ से मनुष्य अज्ञान और भ्रम से मुक्त होकर सत्य की ओर अग्रसर होता है। यह आत्मबोध की दिशा में पहला कदम है।

विज्ञानमय कोश मनोमय कोश के भीतर स्थित होता है। जहाँ मनोमय कोश विचारों और भावनाओं से जुड़ा है, वहीं विज्ञानमय कोश उन्हें दिशा देता है। यह बुद्धि को स्पष्ट करता है और विवेक का संचार करता है, जिससे मनुष्य भ्रम में न भटके। जब व्यक्ति आत्म-चिंतन

करता है, अनुभवों से सीखता है और अपने निर्णयों का मूल्यांकन करता है, तब यही कोश सक्रिय होता है।

यह कोश आत्मा के अत्यंत निकट होता है। ध्यान और योग के अभ्यास से यह और अधिक निर्मल होता जाता है। जब व्यक्ति अपने भीतर की विवेकशील चेतना को पहचानता है, तब विज्ञानमय कोश प्रकाशित होता है।

वेदांत कहता है कि यह कोश उस दीपक की तरह है जो आत्मा के मार्ग को उजागर करता है। जब मनुष्य इच्छाओं और भ्रमों में उलझ जाता है, तब यह कोश उसे दिशा प्रदान करता है और सत्य की ओर लौटाता है।

तैत्तिरीय उपनिषद के अनुसार, यह वह आवरण है जिसमें बुद्धि का प्रकाश पूर्ण रूप से प्रकट होता है।

बृहदारण्यक उपनिषद कहता है

कतम आत्मेति योऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यन्त-ज्योतिः पुरुषः स समानः सन्नुभौ लोकावनुसञ्चरति ध्यायतीव लेलायतीव स हि स्वप्नो भूत्वेमं लोकमतिक्रामति मृत्यो रूपाणि ॥[6]

विज्ञानमय आत्मा प्राणों के मध्य बुद्धि की ज्योति की भांति चमकती है, जो व्यक्ति को माया और भ्रम से पार कराती है

विज्ञानमय कोश बुद्धि का ही क्षेत्र है। बुद्धि मन और आत्मा के बीच सेतु का कार्य करती है। जब मनुष्य सत्य का चयन करता है और असत्य से दूर रहता है, तब यही कोश सक्रिय रहता है।

यह कोश तीन मुख्य शक्तियों से जुड़ा है —

श्रद्धा — यह संकल्प और स्थिरता प्रदान करती है। श्रद्धा के बिना ज्ञान अधूरा रहता है।[7]

विवेक — यह सत्य और असत्य का भेद कराता है। विवेक के जागृत होने से व्यक्ति भ्रम से मुक्त होता है।

धैर्य — यह निरंतरता और मानसिक स्थिरता देता है, जो ज्ञान के मार्ग में आवश्यक है।

जब व्यक्ति श्रद्धा, विवेक और धैर्य — इन तीनों गुणों को अपनाता है, तब उसका विज्ञानमय कोश शुद्ध और सशक्त होता है।

योग इस कोश को जागृत करने का सबसे प्रभावी साधन है। योग मन को स्थिर और बुद्धि को शुद्ध करता है। धारणा, ध्यान और समाधि के अभ्यास से साधक अपने भीतर के विवेक को अनुभव करता है। जब यह त्रयी पूर्णता से कार्य करती है, तब व्यक्ति की बुद्धि पवित्र हो जाती है और चेतना वैज्ञानिक रूप से विकसित होती है।

वेदांत विज्ञानमय कोश को मोक्ष का द्वार मानता है। जब यह कोश विकसित होता है, तब व्यक्ति संसार की माया को पहचानने लगता है। वेदांत कहता है — अज्ञान ही दुखों का मूल कारण है, और जब बुद्धि निर्मल होती है, तब अज्ञान मिटता है। यही स्थिति व्यक्ति को आनंदमय कोश की ओर ले जाती है, जहाँ आत्मा का पूर्ण आनंद अनुभव होता है।

विज्ञानमय कोश व्यक्ति के जीवन की दिशा निर्धारित करता है। जब यह कोश सशक्त होता है, तब व्यक्ति सत्य को पहचानता है, गलत निर्णयों से बचता है, मानसिक अशांति से ऊपर उठता है, जीवन में संतुलन लाता है और आत्मा के आनंद को अनुभव करता है।

जब मनुष्य इस कोश को विकसित करता है, तो उसकी चेतना जागृत होती है, जीवन उद्देश्यपूर्ण बनता है और वह सच्चे अर्थों में शांति और पूर्णता प्राप्त करता है।

सम्बद्धग्रन्थसूची

1. *वाक्यपदीयम्* (हेमचन्द्राचार्य-टीका सहित). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज।
2. *काव्यादर्श* (विद्यानिवास मिश्र-टीका सहित). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।
3. *ऋग्वेदसंहिता* (सायणभाष्य सहित). वाराणसी: चौखम्बा विद्या भवन।
4. *तैत्तिरीयोपनिषद्* (शांकरभाष्य सहित). दिल्ली: परिमल प्रकाशन।
5. *बृहदारण्यकोपनिषद्* (आनन्दगिरि-टीका सहित). कोलकाता: अद्वैत आश्रम।
6. *अष्टाध्यायी* (काशिकावृत्ति सहित). वाराणसी: चौखम्बा ओरिएण्टालिया।
7. *चरकसंहिता* (श्रीमद्गङ्गाधरकृत भाष्य सहित). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत संस्थान।
8. *उपनिषद्-संग्रह* (हिन्दी व्याख्या सहित). मुंबई: बॉम्बे संस्कृत एण्ड प्राकृत सीरीज़।
9. *भारतीय भाषा-विज्ञान: संस्कृत एवं आधुनिक भाषाओं की तुलनात्मक अध्ययन-पद्धति*. नई दिल्ली: भारतीय विद्या भवन।
10. *योगवसिष्ठ सार* (आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक अध्ययन सहित). जयपुर: राष्ट्रीय संस्कृत पुस्तकमाला।

पाद टिप्पणी

[1]वाक्यपदीयम् ,1.123

[2]काव्यादर्श,1.4

[3]ऋग्वेद,1.164.45

[4]भारतीय संविधान, आठवीं अनुसूची

[5]देहोऽयमन्नभवनोऽन्नमयस्तु कोश-श्चान्नेन जीवति विनश्यति तद्विहीनः।त्वक्चर्ममांसरुधिरास्थिपुरीषराशिर्नायं स्वयं भवितुमर्हति नित्यशुद्धः॥ 156 विवेकचूडामणि

[6]बृहदारण्यकोपनिषद्, 4.3.7

[7]गुरूपदिष्टवेदान्तवाक्येषु विश्वासः श्रद्धा , वेदान्तसार, 24